प्रकरण सत्ताईस

भारत में वापसी-भाग १

वायुयान रात-भर उड़ता रहा और सवेरे लंदन पहुँचा। श्रील प्रभुपाद ने विश्राम की योजना बनाई थी। वे हवाई-अड्डे के एक होटेल में गए, उन्होंने मालिश कराई और आराम किया। तीसरे पहर वे उठे, स्नान किया और कीर्तनानन्द के साथ अपने वायुयान में सवार हुए, जो मास्को होता हुआ नई दिल्ली जाने को था। अभी वायुयान जमीन पर ही था कि चालक-दल के एक सदस्य ने घोषणा की, "स्वास्थ्य-नियमों के कारण थोड़ा विलम्ब होगा।" एक यात्री, जो उस दिन वायुयान से उतरा था, अब चेचक से बीमार हो गया था; इसलिए वायुयान को अच्छी तरह धूनी देकर शुद्ध करना था। प्रभुपाद और कीर्तनानन्द रात-भर के लिए एक्सेलजियर होटेल के एक कमरे में ठहर गए।

अगले दिन २४ जुलाई को सवेरे होटेल के अपने कमरे में बैठे हुए जो वातानुकूल और टेलीविजन से युक्त था और जिनमें से श्रील प्रभुपाद ने किसी का उपयोग नहीं किया था, उन्होंने ब्रह्मानंद को न्यूयार्क एक पत्र लिखा।

> मेरा आशीष स्वीकार करना। मैं तुम्हारे वियोग की भावनाओं के बारे में बराबर सोचता रहता हूँ। अपने कर्तव्य का पालन अच्छी तरह करना और कृष्ण हर तरह से तुम्हारी सहायता करेंगे। हमें यहाँ १६ घंटे रुकना पड़ा। हम आज सवेरे ९ बजे दिल्ली के लिए प्रस्थान कर रहे हैं। पिछले दिनों भारत के राजदूत श्री बी.के. नेहरू का ध्यान मेरी ओर आकृष्ट किया गया है। मैंने उनसे अपने स्थायी प्रवेश-पत्र के विषय में कहा है और उन्होंने वादा किया है कि मेरे वापस आने पर वे मेरी सहायता करेंगे। उनसे मिलने का समय लो और सूचित करो कि मैं अपने *श्रीमद्भागवत* का पूरा सेट और अन्य साहित्य उन्हें भेंट करना चाहता हूँ। तब वाशिंगटन डी.सी. में स्वयं उनके पास जाओ और पुस्तकें उन्हें भेंट करो। हो सकता है कि ज्योंही मुझ में कुछ ताकत आ जायेगी, त्योंही मैं वापस आ जाऊं।

> अब तक मेरे स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ी नहीं हुई है और आशा है कि मैं आज शाम तक दिल्ली पहुँच जाऊँगा। वृन्दावन पहुँचने के बाद मैं तुम्हें फिर लिखूँगा। सभी लड़कों और लड़कियों को मेरा उत्कट प्यार और आशीष देना। मुझें अपने आन्दोलन के बारे में पूरी आशा है। सुस्थिर बने रहो, मेरे आदेशों का सच्चाई से पालन करो, हरे कृष्ण का जप करो और कृष्ण तुम्हें सभी बल प्रदान करेंगे।

प्रभुपाद और कीर्तनानन्द उड़ान से मास्को पहुँचे। वहाँ वे टर्मिनल के इर्द-गिर्द घूमते रहे, प्रभुपाद के कथनानुसार प्रचार-चित्रों को देखते हुए। एक घंटा विश्राम के बाद वे पुनः वायुवान में सवार हुए और आठ घंटे तक फिर उड़ते रहे। आधी रात के आसपास वे दिल्ली पहुँचे।

• • •

दिल्ली की गरमी जिसने उन लोगों का स्वागत किया, प्रभुपाद को अच्छी लगी। वे इसीलिए भारत आये थे। हवाई अड्डे के अन्दर छत से लगे पंखों के चलने से उमस से भरी हवा मिल रही थी, जबकि प्रभुपाद और कीर्तनानन्द मंद गति से आगे बढ़ने वाली यात्रियों की पंक्ति में खड़े थे और यूनिफार्म वाले क्लर्क उनके पासपोर्ट और कस्टम-फार्मों की जाँच कर रहे थे। इनके पास न तो पश्चिमी ढंग के कम्प्यूटर थे और न वह कार्य-दक्षता थी। आव्रजन और तटकर-क्षेत्रों के बाहर आगन्तुक यात्रियों की प्रतीक्षा में खड़े लोग हाथ हिलाकर उनका स्वागत कर रहे थे, अभिवादन कर रहे थे और मित्रों एवं परिवार के सदस्यों के साथ आ रहे थे।

अपना सामान ले लेने और तटकर अधिकारियों से निबटने के बाद प्रभुपाद और कीर्तनानन्द हवाई अड्डे के बाहर फुटपाथ पर खड़े हो गए। यद्यपि प्रभुपाद ने अपना स्वेटर उतार दिया था, पर कीर्तनानन्द अपने काले ऊनी सूट में पसीने से तर खड़ा था। रात के २ बजे थे। सभी ओर यात्री अपने प्रियजनों से मिल रहे थे, जो उन्हें आलिंगन दे रहे थे—कोई-कोई माला भी पहना रहे थे—और उन्हें मोटरकारों या टैक्सियों में बैठा रहे थे। लेकिन प्रभुपाद के लिए वहाँ कोई नहीं था। यह हवाई अड्डे के हाल के उन साश्रु दृश्यों से भिन्न था, जहाँ प्रभुपाद अपने प्रिय भक्तों के साथ थे। इस समय प्रभुपाद अपने प्रिय शिष्यों से घिरे होने के स्थान पर टैक्सी-चालकों और कुलियों से घिरे थे, जो मजदूरी पर उनका सामान ले जाने को आतुर थे। प्रभुपाद ने एक टैक्सी-चालक से हिन्दी में कहा कि वह उन्हें पुरानी दिल्ली में छिप्पीवाड़ा ले चले। चालक ने उनका सामान डिगी में रखा और प्रभुपाद अपने शिष्य के साथ पीछे की सीट पर जा बैठे।

छोटी-सी ऐमबैसेडर टैक्सी श्रील प्रभुपाद की सुपरिचित सड़कों से होकर चली। रात में यातायात विरल था—कभी कोई टैक्सी मिल जाती, कभी आटो-रिक्शा। अधिकतर सड़कें खाली और शान्त थीं, दुकानें बन्द थीं, कहीं कहीं कुछ आदमी या गौएँ बाहर सोती मिलतीं।

अभी कुछ ही वर्ष हुए प्रभुपाद ने इसी स्थान पर अपनी पत्रिका *बैक टु गॉडहेड* बेची थी, अनुदानों के लिए याचनाएँ की थीं और *श्रीमद्भागवत* का प्रकाशन किया था। उन दिनों वे अकेले थे, उनके पास न पैसे थे, न आवास। फिर भी वे प्रसन्न थे, कृष्ण पर पूर्णत: निर्भर रहकर।

किन्तु भारत के नेता वैदिक संस्कृति से विमुख हो रहे थे और पश्चिम का अनुकरण कर रहे थे। यद्यपि कुछ भारतीय तब भी वैदिक संस्कृति का अनुगमन कर रहे थे, पर अधिकतर ऐसे नीम-हकीम अध्यापकों के प्रभाव में थे, जो कृष्ण को परम ईश्वर नहीं मानते थे। इसलिए प्रभुपाद को विवश होकर पश्चिम में वैदिक संस्कृति का पौधा रोपने के लिए जाना पड़ा था। वे अपने पूर्वगामी आध्यात्मिक गुरुओं की दूरदर्शिता के सख्त हामी थे और समय ने उन्हें सही सिद्ध किया था : कृष्णभावनामृत के लिए पश्चिमी जगत बहुत उर्वर भूमि था।

जब टैक्सी पुरानी दिल्ली का चक्कर लगाती चावड़ी बाजार में पहुँची, तो प्रभुपाद ने मुद्रण और कागज की दुकानों को देखा, जो इस समय रात के कारण बन्द थीं। हाथ से खींचे जाने वाले ठेलों का सामान्य भारी यातायात भी इस समय नहीं था। यद्यपि कुछ मजदूर अब भी अपने ठेलों पर सोये थे, सवेरे ही वे किसी बाहरी कुएँ पर स्नान करेंगे और फिर ठेला खींचने के काम में लग जायेंगे। जब श्रील प्रभुपाद अपने *श्रीमद्भागवत* के प्रारम्भिक खंडों के प्रकाशन की देखभाल कर रहे थे, तब वे नित्य इन सड़कों से आया-जाया करते थे, कागज खरीदने के लिए, मुद्रक से प्रूफ ले जाने के लिए और संशोधन के बाद प्रूफ मुद्रक को लौटाने के लिए, आदि कारणों से। उनके प्रथम खंड को बड़ी सफलता मिली थी।

चावड़ी बाजार में अगल-बगल में कई सड़कें थीं, जिनमें से एक से वह तंग गली निकलती थी, जो छिप्पीवाड़ा पहुँचती थी। उसके मुहाने पर लोहे के खंभे गाड़ दिए गए थे, जिस कारण उसमें आटो गाड़ियां और रिक्शा नहीं जा सकती थी। टैक्सी के चालक ने खुली सड़क पर टैक्सी रोक दी और किराए के लिए मुड़ा। प्रभुपाद ने अपनी थैली में से चालीस रुपए निकाले, (ये वही चालीस रुपए थे, जो वे १९६५ ई. में जलपोत द्वारा अमेरिका जाते समय अपने साथ ले गए थे), लेकिन चालक ने सारे के सारे चालीस रुपए रख लिए और कहा कि उसका सही किराया चालीस रुपए था। प्रभुपाद ने प्रतिवाद किया।

किराया इसका आधा भी नहीं होना चाहिए। वे दोनों हिन्दी में जोर से बहस करते रहे। चालक ने रुपए अपनी जेब में रख लिए थे और वह कुछ वापस करने को तैयार नहीं था। प्रभुपाद जानते थे कि उस समय कोई पुलिस का सिपाही मिलना कठिन था। अन्त में प्रभुपाद ने उसे जाने दिया, यद्यपि वे जानते थे कि यह सिवाय लूट के और कुछ नहीं थी। "उसने मुझे ठग लिया," प्रभुपाद ने कहा। सामान उठाकर वे और कीर्तनानन्द मकानों को पार करते छिप्पीवाड़ा राधा-कृष्ण मन्दिर के दरवाजे पर पहुँचे।

दरवाजे में ताला लगा था। उसे जोर से खटखटाते हुए प्रभुपाद ने श्रीकृष्ण पंडित को पुकारा। अन्त में एक आदमी द्वार पर आया, उसने प्रभुपाद को पहचाना और वह उन्हें अन्दर ले गया। उन्हें सीढ़ियों से ऊपर ले जाकर उसने प्रभुपाद के कमरे का ताला खोल दिया। प्रभुपाद ने बत्ती जला दी।

कमरा खाली था और धूल से भरा था। छत से लटकते बल्ब से मात्र प्रकाश और छायाएँ पैदा हो रही थीं। फर्श पर तीन-फुट-उँचा उभार (गुंबद) था, जिससे यह पता लगता था कि उसके ठीक नीचे राधा और कृष्ण के श्रीविग्रह और उनकी वेदिका थी। (गुम्बद के कारण अचानक कोई श्रीविग्रहों के ऊपर चलने का अपराध नहीं कर सकता था।) अलमारी में *श्रीमद्भागवत* के मुद्रित पृष्ठ, उसके आवरण और भक्त-संघ के संभाव्य ग्राहकों के लिए पत्र के फार्म भरे थे। हर चीज वैसी ही थी, जैसी प्रभुपाद ने उसे छोड़ा था।

"यही वह कमरा है, जिसमें मैंने *श्रीमद्भागवत* का संग्रह किया," श्रील प्रभुपाद ने कीर्तनानन्द को बताया। मैं यहाँ सोता था। और यहाँ मेरा कुकर और टाइप-राइटर रहते थे। मैं सोता और टाइप करता और भोजन बनाता और टाइप करता और सोता और टाइप करता।" कीर्तनानन्द को यह सोचकर धक्का लगा कि प्रभुपाद ऐसे निम्नकोटि के स्थान में रहते थे। वह साफ भी तो नहीं था।

यद्यपि कीर्तनानन्द को अपने सूट में असुविधा हो रही थी और उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि उससे कैसे छुटकारा मिले, फिर भी उसने स्वामीजी के लिए एक पतली चटाई प्राप्त की। आयुर्वेद के दो चिकित्सक आए। वे दोनों सहमत थे कि प्रभुपाद की बीमारी दिल के कारण थी, लेकिन अब खतरा टल गया था। उन्होंने ओषधि दी और कहा कि प्रभुपाद को खाने, विश्राम करने और काम करने में नियमित कार्यक्रम का पालन करना चाहिए। श्रीकृष्ण पंडित आए और वार्तालाप के लिए उनके निकट बैठ गए। प्रभुपाद ने उन्हें अमेरिका में अपनी सफलता और सैन फ्रांसिस्को और न्यूयार्क के अपने युवा भक्तों के बारे में बताया। अपना रिकार्ड बजाकर उन्होंने श्रीकृष्ण पंडित को सुनाया और इससे मन्दिर के अन्य कमरों में रहने वालों की जिज्ञासु भीड़ वहाँ इकट्ठी हो गई।

तीसरे पहर प्रभुपाद को कफ जाने लगा। वह कोई गम्भीर नहीं लग रहा था और उन्होंने कहा कि वे अगले दिन वृन्दावन जाना चाहते थे। लेकिन शाम तक कफ जोर पकड़ गया; वे आराम नहीं कर सके। कीर्तनानन्द ने मालिश करके देखा और आयुर्वेद के चिकित्सकों द्वारा बताई गई गोलियाँ दीं, लेकिन किसी से लाभ नहीं हुआ। प्रभुपाद रात-भर जागते रहे और जब सवेरे कीर्तनानन्द ने उनका स्पर्श किया, तो उन्हें हल्का सा बुखार था।

डॉक्टर फिर आए। प्रभुपाद का तापमान १०४ डिग्री से ऊपर था। उन्होंने चाय और आयुर्वेदिक चूर्ण दिया, जबकि कीर्तनानन्द यह सब शंकालु बना देखता रहा। चूँकि प्रभुपाद को लेट जाने पर साँस लेने में बहुत कठिनाई हो रही थी, इसलिए कीर्तनानन्द ने सोचा कि हो सकता है कि यह निमोनिया हो। अत: उसने उन्हें पेनिसिलिन दिया, जो वह अपने साथ लाया था। तीसरे पहर एक वयोवृद्ध सिख डॉक्टर जो एलोपैथी में प्रैक्टिस करते थे, उधर आ निकले और प्रभुपाद को पेनिसिलिन का इंजेक्शन दिया। तब प्रभुपाद को नींद आ गई और चौबीस घंटे में उन्हें पहली बार कुछ विश्राम मिला।

जब प्रभुपाद सोये थे, उस बीच कीर्तनानन्द ने न्यूयार्क के गुरु-भाइयों को एक पत्र लिखा।

> मैं जानता हूँ कि तुम चाहते होगे कि मैं साफ-साफ बताऊँ कि गुरु महाराज कैसे हैं और वे ठीक नहीं हैं। परिणाम—हर समय और स्पष्टत: इस समय और अधिक—कृष्ण के हाथ में है। कृपा करके हरे कृष्ण का जप करें, क्योंकि केवल वे ही उन्हें बचा सकते हैं। उन्होंने ही उन्हें पहले बचाया था और वे ही फिर बचा सकते हैं। मुझे मालूम है कि उनका काम अभी पूरा नहीं हुआ है और कृष्ण की कृपा से उनके प्राण की रक्षा फिर हो सकती है।

कीर्तनानंद ने न्यूयार्क के भक्तों से यह भी लिखा कि वे सैन फ्रांसिस्को, सान्ता फे और बोस्टन के भक्तों कों बताएँ और उनसे भी स्वामीजी के स्वास्थ्य के लिए जप करने को कहें। उसने उन्हें याद दिलाया कि स्वामीजी के सभी आदेशों का कड़ाई से पालन किया जाये।

अगले दिन श्रील प्रभुपाद का तापमान कम होकर १००.६ डिग्री पर आ गया। वे अब भी बीमार थे। लेकिन वे वृन्दावन जाने की बात करने लगे। उन्होंने दिल्ली में उनके पुस्तक-विक्रेता, आत्माराम एंड सन्स को एक पत्र लिखवाया, जिसमें *श्रीमद्भागवत* की बिक्री का पूरा हिसाब माँगा। पुराने परिचित लोग स्वामीजी के पास आए, किन्तु उन्हें यह

देखकर निराशा हुई कि स्वामीजी उनके निमंत्रण स्वीकार करने में असमर्थ थे। प्रभुपाद ने कहा कि उनके स्थान पर कीर्तनानन्द को आमंत्रित किया जाये।

कई दिनों तक कीर्तनानन्द इन शुद्ध हिन्दुओं के घर जाता रहा। वह अपने पोर्टेबल फोनोग्राफ पर रिकर्ड बजाता और साथ में बाहें ऊपर उठाये नाचता और गाता था। उसके बाद वह छोटा-सा भाषण करता। उसके मेजबान उसे साधु रूप में इस बात पर मुग्ध होकर स्वीकार करते कि एक अमेरीकन ने इतने मनोयोग से कृष्णभावनामृत को स्वीकार किया था।

• • •

छह दिन तक दिल्ली में रहने के बाद पहली अगस्त को प्रभुपाद वृन्दावन गए। कीर्तनानंद ने न्यूयार्क को लिखा :

प्रिय बंधुओ और बहनो,

वृन्दावन से कृष्ण के नाम में अभिवादन।

स्वामीजी पहले से स्पष्टतः बहुत अच्छे हैं—विशेषकर वृन्दावन पहुँचने के बाद से। उनके नेत्रों में एक विशेष चमक है। हम कल सवेरे (३१ जुलाई को) दिल्ली से ताज एक्सप्रेस से विदा हुए और दो घंटे में मथुरा पहुँच गए। हम 'विशेष तृतीय श्रेणी' में सवार थे और वह संतोषजनक थी, उसमें भीड़ नहीं थी, जैसाकि तृतीय श्रेणी में सामान्यतः होती है। जो हो, हम किसी तरह यहाँ पहुँच गए हैं और रहने की व्यवस्था में लगे हैं। स्वामीजी के पास दो बहुत अच्छे कमरे हैं—वे बहुत ठंडे हैं और जहाँ से *भागवत्* का पाठ किया जाता है, वे ठीक उस बरामदे के पास हैं। यह कितना समुचित है! स्वामीजी की ओर से कठिनाई यह है कि सभी भारतीय उनका दर्शन करना चाहते हैं; वे बहुत आग्रह करते हैं और मैं उन्हें रोक पाने में बहुत सफल नहीं हूँ।

सांसारिक दृष्टि से देखने पर वृन्दावन बहुत अच्छा स्थान है। जमीन समतल है और यहाँ बहुत-से पेड़-पौधे, बन्दर, मोर और हाँ, मन्दिर हैं। यह बहुत गरीब भी है। यहाँ की जनता और मन्दिरों की, दोनों की अवस्था खराब हैं। लेकिन आध्यात्मिक दृष्टि से देखने पर यहाँ बहुत-से महान् भक्त हैं और सड़कों में घूमने निकलें तो सर्वत्र तिलकधारी और माला पर जप करते हुए लोगों को देखकर आश्चर्य होता है। यदि मैं अपने में उनकी कृष्ण-भक्ति का एक अंश भी विकसित कर सकूँ, तो मेरा जीवन सफल हो जायेगा। यहाँ के मन्दिरों में दिन-भर बार-बार

घंट-घड़ियालों का बजना सुनना भी बहुत रोमांचकारी है। गत रात्रि में हमने भगवान् दामोदर के मन्दिर में रिकर्ड बजाया और कुछ स्थानीय लोगों के साथ कीर्तन किया। वह बहुत बढ़िया था। लेकिन तुम लोगों को आश्चर्य होगा, यदि मैं कहूँ कि न्यूयार्क में तुम लोग जो कीर्तन करते हो, वह मुझे अधिक पसन्द है।

वृन्दावन में प्रभुपाद केवल एक दिन ही रहे थे और उनके स्वास्थ्य में जरा-सा ही सुधार हुआ था कि वे अमेरिका लौटने की योजना बनाने लगे, "मैं हमेशा तुम लोगों के बारे में सोचा करता हूँ," उन्होंने भक्तों को लिखा, जिन्हें उन्होंने 'प्रिय विद्यार्थियो,' कहकर संबोधित किया।

मैं पाश्चात्य जगत के अपने कार्यकलापों को बन्द नहीं कर सकता और मैंने तुमसे सिर्फ छह मास का अवकाश लिया है। सम्भव है कि उसके पूरा होते ही या पहले ही मैं तुम्हारे पास फिर पहुँच जाऊँ। मेरे शारीरिक लक्षणों को देखकर कीर्तनानन्द कहता है कि मुझ में सुधार हो रहा है। मुझे भी ऐसा ही लगता है।

दिल्ली में प्रभुपाद को ब्रह्मानंद का पत्र मिला था, जिसमें लिखा था कि मैकमिलन कम्पनी की निश्चित रुचि *भगवद्गीता* को प्रकाशित करने में थी। वृन्दावन से प्रभुपाद ने ब्रह्मानंद को लिखा कि वह तुरन्त उनकी ओर से करारनामे पर हस्ताक्षर कर दे। प्रभुपाद सोच रहे थे कि *भगवद्गीता* को अपनी ओर से जापान या भारत में छापें या मैकमिलन की प्रतीक्षा करें। मैकमिलन से छपाने में जो प्रतिष्ठा का या धन का लाभ होगा, उसकी चिन्ता प्रभुपाद को नहीं थी, उनकी पहली चिन्ता यह थी कि ग्रंथ जितनी जल्दी हो सके, छप जाये।

कमिशन से मुझे संतोष होगा और मुझे यह देखकर प्रसन्नता होगी कि पुस्तकों को सैकड़ों हजारों लोग पढ़ रहे हैं। उनसे जो कुछ लाभ होगा, उसका उपयोग यहाँ अमेरिकन भवन की स्थापना में किया जायेगा।

प्रभुपाद राधा-दामोदर मन्दिर के अपने पुराने कमरे में रुके थे। वे अब भी असमर्थ थे और कीर्तनानन्द उनकी मालिश और देखभाल कर रहा था। वह स्वयं यहाँ की गरमी से बेचैन और थका हुआ था। किन्तु प्रभुपाद का मन नए कृष्णभावनामृत आन्दोलन के भावी रूप की एक सक्रिय तथा महत्त्वाकांक्षी कल्पना से दूसरी पर विचरण करता रहा।

श्रीमद्‌भागवत के जो खंड तैयार थे, उनके प्रकाशन के बारे में वे खुलकर बात करते; वे जानना चाहते थे कि क्या मैकमिलन उन्हें छापने को तैयार था और उनके शिष्य उनकी ओर से सारा कार्य कर सकेंगे। कार्य बहुत अधिक था। स्वयं उसकी देखभाल के लिए वे अक्तूबर तक अमेरिका लौट जाना चाहते थे।

वृन्दावन का तापमान बढ़कर ११० डिग्री हो गया था और प्रभुपाद और कीर्तनानन्द को दरवाजे बन्द करके और पंखा चलाकर अन्दर ही समय गुजारना पड़ता था। कीर्तनानंद मुश्किल से अपने कर्तव्यों का पालन कर पाता था, पर प्रभुपाद के लिए गरमी स्फूर्तिकारक थी और वे कहते थे कि उससे उनके स्वास्थ्य में सुधार होने लगा था। तब, पहले सप्ताह के बाद मानसूनी वर्षा शुरू हो गई और गरमी शान्त होने लगी।

१० अगस्त को कीर्तनानन्द ने अमेरिका को फिर लिखा।

> भगवान् जानते हैं यह बहुत गरम जगह है! पर अन्त में वर्षा शुरू हो गई है और गरमी से कुछ राहत है। विश्वास करो, यहाँ बड़ी गरमी थी। लेकिन अब अधिकतर समय में खूब वर्षा हो रही है—और इससे मेरे लिए मौसम बहुत आरामदेह हो गया है—लेकिन दुर्भाग्य से स्वामीजी के लिए नहीं। और मुझे दस्त की अनिवार्य बीमारी लग गई है, जो लगभग एक सप्ताह से चल रही है।
>
> कल झूला का पर्व आरम्भ हुआ—जिसमें राधा और कृष्ण बाहर निकलकर लगभग पाँच दिन झूले में झूलते हैं। इसलिए मैंने आज लगभग आधे दर्जन मन्दिरों का चक्कर लगाया। कुछ मन्दिर अन्दर से अत्यन्त सुन्दर हैं, यद्यपि बहुत से छोटे हैं। फिर भी मैं पूरी सच्चाई और ईमानदारी से कह सकता हूँ कि इनमें से कोई भी दिव्यता में उतना सुन्दर और आध्यात्मिक नहीं है, जितना ३७२० पार्क एवन्यू मांट्रियल का मन्दिर। और मैं समझता हूँ कि इसमें स्वामीजी भी मुझ से सहमत होंगे।

कीर्तनानन्द के पत्र से अमेरिका के भक्तों का साहस बढ़ा और उनकी शंका के विचार को पुष्टि मिली : यह न हिन्दुत्त्व था, न भारत था, यह स्वामीजी थे और हरे कृष्ण कीर्तन था, जो उनके आध्यात्मिक जीवन को पोषण दे रहा था।

• • •

जब प्रभुपाद के आध्यात्मिक शिष्यों ने उत्तरी अमेरिका के आधे दर्जन प्रगतिशील केन्द्रों से उन्हें लिखा तो प्रभुपाद ने उत्तर दिया :

> वृन्दावन तो हमारे लिए केवल प्रेरणा केन्द्र है, हमारा वास्तविक कार्यक्षेत्र सारा संसार है। मैं मर भी जाऊँ तो तुम मेरी भावी आशाएँ हो, तुम मेरे कार्य को पूरा करोगे। मुझे तुम सभी लोगों की बहुत याद आती है। जो कार्य शुरू हुआ है, उसे आगे बढ़ाते जाओ।

ब्रह्मानंद ने न्यूयार्क से लिखकर कारण जानना चाहा था कि स्वामीजी, जो सच्चे भक्त थे, इस तरह गहन बीमारी से कष्ट क्यों भोग रहे थे। स्वामीजी ने व्याख्या की थी कि प्रतिबन्धित आत्माओं और प्रारम्भिक भक्तों तक पर 'माया का आक्रमण' होता है। पर क्या स्वामीजी पर भी माया का आक्रमण हो रहा था? १४ अगस्त को श्रील प्रभुपाद ने उत्तर दिया।

> मुझ पर माया के आक्रमण से भयभीत मत हो। जब दो युद्धोन्मुख दलों में युद्ध होता है, तो हमेशा तैयार रहना चाहिए कि कभी-कभी पराजय भी हो सकती हैं। तुम्हारा देश और पाश्चात्य जगत अधिकतर माया और प्रकृति के रजो और तमो गुणों के वश में है और माया के विरुद्ध मेरी युद्ध-घोषणा सचमुच एक महान् संघर्ष है। माया ने देखा कि एक वर्ष में मैं कितना सफल हुआ और तुम्हारे और अन्यों की तरह मुझे कितने सच्चे युवा अनुयायी प्राप्त हुए; इसलिए माया के लिए यह एक बड़ी पराजय थी। पाश्चात्य जगत के किशोरों का अवैध यौनाचार, मादक-द्रव्य-सेवन, मांस-भक्षण और जुआ खेलना छोड़ना माया के कार्यकलापों के लिए महान् पराजय थी। अतएव उसने मेरी वृद्धावस्था की दुर्बलता का लाभ उठाया और मुझे मार डालना चाहा। परन्तु कृष्ण ने मेरी रक्षा की। इसलिए हमें माया की प्रशंसा करने से अधिक कृष्ण को धन्यवाद देना चाहिए। जहाँ तक मेरे स्वास्थ्य की वर्तमान दशा का प्रश्न है, मैं समझता हूँ कि उसमें सुधार हो रहा है। कम-से-कम मैं न्यूयार्क की तुलना में यहाँ भोजन अधिक ठीक तरह कर रहा हूँ। इसलिए ज्योंही युद्ध-क्षेत्र में लौटने के लिए मैं कुछ और ठीक हो गया, त्योंही मैं तुम लोगों के बीच पहुँच जाऊंगा।

•   •   •

श्रील प्रभुपाद वृन्दावन में एक अमेरिकन भवन की कल्पना करते थे, जहाँ रहकर अमरीकी शिष्य संस्कृत और वैष्णव साहित्य का अध्ययन कर सकें। जब उन्हें लकवा हो

गया था, तो उन्होंने कहा था कि राय राम को *भागवत* का अनुवाद पूरा करना चाहिए। उन्होंने अच्युतानन्द, गौरसुन्दर और अन्यों से यह भी अनुरोध किया था कि वे संस्कृत, बंगाली और हिन्दी सीख लें, जिससे यदि वे अच्छे न हो सकें, तो ये शिष्य उनका कार्य आगे बढ़ा सकें। और उन्हें आशा थी कि ब्रह्मानंद, हयग्रीव, राय राम जैसे उनके कुछ प्रमुख शिष्य भारत आएँगे, यहाँ सम्पत्ति बनाएँगे और उनके 'अमरीकी भवन' की स्थापना करेगें। "यदि मैं अच्छा भी हो जाऊँ" उन्होंने ९ सितम्बर को लिखा, "तो भी मेरे लिए अमरीकी भवन के मामलों की देखभाल सम्भव न होगी।"

प्रभुपाद ने अपने एक गुरु-भाई, स्वामी बी.एच. बोन महाराज से प्रार्थना करने का निश्चय किया कि वे अमेरिका से आए कुछ विद्यार्थियों को अपनी इंस्टीट्यूट आफ ओरियंटल फिलासफी (प्राच्य दर्शन संस्थान) में जगह दे दें। स्वामी बान महाराज का संस्थान एक क्षेत्रीय महाविद्यालय था, जिसमें लगभग तीन सौ विद्यार्थी थे और वृन्दावन में स्थित था और आगरा विश्वविद्यालय से सम्बन्धित था। वह एक ऐसा संस्थान था, जिसे भारत में "स्नातक महाविद्यालय" कहते हैं। उसका उद्देश्य अपने स्नातकों को उत्कृष्ट काम-धंधे के योग्य बनाकर उनकी आर्थिक दशा में सुधार करना था।

जब श्रील प्रभुपाद और कीर्तनानन्द स्वामी बान महाराज से मिलने उनकी इंस्टीट्यूट में गये, तो स्वामी बान ने उनका स्वागत एक साफ-सुथरे, कुर्सियों, कौचों और रेडियो से सुसज्जित कमरे में किया। स्वामी बान चमड़े की चप्पलें, धोती के नीचे से झलकने वाले मोजे, इस्त्री की हुई कमीज, जिसमें पीतल के दुहरे बटन लगे थे, पहने हुए थे। वे सौम्य और परिष्कृत लगते थे—एक शिक्षित व्यक्ति जिनके सिर के सफेद बालों के बीच सीधी माँग कढ़ी थी। यद्यपि वे वृन्दावन के निवासी थे, १९३० ई. के दशक में उन्होंने इंगलैंड में कई वर्ष बिताए थे, जहाँ राज-परिवार के कई सदस्यों से उनकी भेंट हुई थी और कई कालेजों में उन्होंने व्याख्यान दिए थे। लेकिन लोगों में वे कोई स्थायी रुचि नहीं जगा सके थे। जब प्रभुपाद १९६५ ई. में न्यूयार्क में अकेले संघर्ष कर रहे थे, तो उन्होंने स्वामी बान को सहायता के लिए लिखा था। लेकिन स्वामी बान ने उत्तर नहीं दिया था। अब भी, जब प्रभुपाद ने उन्हें अमेरिका में अपने कामों के बारे में बताया, तो बान महाराज के पास कहने को कुछ अधिक नहीं था। लेकिन इस सम्भावना में उनकी रुचि जरूर थी कि अमेरिका से विद्यार्थी आएँ और उनके संस्थान में रहकर अध्ययन करें। विदेशी विद्यार्थियों के आने से संस्थान का सम्मान सरकार की आँखो में बढ़ जायेगा। उन्होंने कहा कि विद्यार्थियों को सम्भवत: नि:शुल्क रखा जा सकेगा।

बान महाराज की भेंट से उत्साहित होकर प्रभुपाद ने अपने शिष्यों को कई पत्र लिखे कि वे आएँ और संस्कृत का अध्ययन करें।

> यदि तुम संस्कृत का अध्ययन करना चाहते हो, तो इस संस्थान में पर्याप्त अवसर है। हमारी कुछ प्रारम्भिक वार्ता हुई है और हमें आशा है कि स्वामी बान हमारे अपने भवन के लिए कुछ जमीन दे सकेंगे। पर जैसी स्थिति है उसमें भी ऐसी सुविधाएँ मिल सकती हैं कि जो विद्यार्थी यहाँ संस्कृत और गोस्वामी-साहित्य का अध्ययन करने आएँगे, उनके लिए कोई कठिनाई नहीं होगी। हमारे विद्यार्थियों के लिए यह अच्छा अवसर है और मुझे जानकर बहुत प्रसन्नता होगी कि तुम में से कितनों की इच्छा यहाँ आने की है।

• • •

२८ अगस्त को जन्माष्टमी के दिन श्रील प्रभुपाद ने राधा-दामोदर मन्दिर के एक समारोह में कीर्तनानंद को संन्यासी की उपाधि प्रदान की। इस प्रकार श्रील प्रभुपाद के शिष्यों में संन्यासी बनने वाला कीर्तनानंद पहला था। वह कीर्तनानन्द स्वामी कहलाया। दीक्षा-समारोह के अवसर पर भगवान् कृष्ण का जन्म देखने के लिए सैकड़ों अतिथि उपस्थित थे और उनमें से बहुतों ने आगे बढ़कर युवा संन्यासी को बधाई दी। किसी ने कहा कि वह भगवान् चैतन्य जैसा दिख रहा था। श्रील प्रभुपाद ने लिखा।

> वह शीघ्र संयुक्त राज्य अमेरिका लौट जायेगा, ताकि वहाँ अधिक उत्साह और सफलता से प्रचार-कार्य शुरू कर सके। इस बीच में इस 'श्वेत संन्यासी' का उपयोग मैं भारत में कुछ सदस्यों की भरती के लिए करूँगा।

• • •

सितम्बर के शुरू में अच्युतानन्द दिल्ली पहुँचा। एक हिन्दू महिला ने उसे पाँच रुपए दिए और वह गाड़ी से मथुरा पहुँचा जहाँ उसने केशव गौड़ीय मठ का रास्ता मालूम किया। प्रभुपाद के एक मित्र नारायण महाराज ने अच्युतानंद को संरक्षण दिया और उसे वह कमरा दिखाने के बाद, जहाँ प्रभुपाद ने १९५९ ई. में संन्यास लिया था, उसे वृन्दावन की बस पर बैठा दिया और एक वृद्ध को मार्गदर्शक के रूप में उसके साथ कर दिया। उस मार्गदर्शक के साथ अच्युतानन्द एक रिक्शे पर बैठकर राधा-दामोदर मन्दिर के सामने पहुँचा।

अच्युतानंद प्रभुपाद के कमरे में प्रविष्ट हुआ और उनके चरणों में दण्डवत् गिर पड़ा। "ओह," प्रभुपाद बोले, "तुम आ गए।" जब उसने ऊपर देखा तो पाया कि स्वामीजी की दाढ़ी पाँच दिन से बढ़ी थी और उनके तन पर केवल एक कपड़ा था, जो पीछे से उनकी कमर से होता हुआ उनकी छाती को पार करता हुआ उनकी गर्दन के पीछे की ओर बँधा

था। प्रभुपाद मुसकराए, देखने में वे स्वस्थ लगे।

कीर्तनानन्द स्वामी ने भी अच्युतानंद का अभिवादन किया और उसे अपना नया दण्ड दिखलाया।

अच्युतानन्द के लिए वृन्दावन में स्वामीजी के जीवन के बारे में सबसे आश्चर्यजनक चीज उसकी सादगी थी। यद्यपि न्यूयार्क में स्वामीजी का पहनावा सादा था, तब भी वे हमेशा शानदार लगते थे, एक गुरु की तरह। लेकिन यहाँ वे बहुत सादगी और विनम्रता से रहते थे। एक बार जब वे अपने कमरे से बाहर बरामदे में अपने हाथ धोने बैठे तो उनका शरीर तुरन्त मक्खियों से घिर गया। कीर्तनानन्द और अच्युतानन्द मक्खियों से हमेशा परेशान रहते थे—यह बरसात का मौसम था—लेकिन प्रभुपाद ने उनकी कोई परवाह नहीं की और हाथ धोते हुए वे शान्त बैठे रहे।

कीर्तनानन्द और अच्युतानन्द में सहमति थी कि स्वामीजी वृन्दावन के अन्य बाबाओं की भाँति एक निरे बाबा नहीं थे। उनके समान वृन्दावन में दूसरा कोई नहीं था। राधा-दामोदर मन्दिर के मालिक गौरचन्द गोस्वामी निश्चय ही स्वामीजी की तरह नहीं थे। वे मोटा चश्मा लगाते थे और बहुत मुश्किल से देख सकते थे और जब कीर्तनानन्द और अच्युतानन्द मन्दिर में अर्चा-विग्रहों के सामने गए, तो गौरचन्द गोस्वामी ने ऊँचे स्वर में उनसे पूछा, "तो आप इन्हें कैसा पसन्द करते हैं? आप सबसे अधिक किसे पसन्द करते हैं?"

"मैं सबको पसन्द करता हूँ।" अच्युतानंद ने कहा।

"मैं सिरे पर रखे उस बड़े अर्चा-विग्रह को पसन्द करता हूँ।" पुजारी ने लापरवाही के साथ कृष्ण के श्रीविग्रह की ओर इशारा करते हुए कहा। "यह जनरल चौधरी से कुछ मिलता-जुलता है।" स्वामीजी के शिष्यों ने एक-दूसरे को देखा—ये किस तरह के लोग हैं? और वे स्वामीजी के पास इसकी व्याख्या के लिए वापस गए।

"वे जाति से गोस्वामी हैं।" प्रभुपाद ने समझाया। मूल गोस्वामी, जैसे जीव गोस्वामी, जिन्होंने राधा-दामोदर मन्दिर की स्थापना की थी, वे श्रीविग्रहों की पूजा के लिए गृहस्थों को रखते थे। और ये जाति गोस्वामी उन प्रारम्भिक गृहस्थ पुजारियों के वंशज थे। प्रभुपाद ने बताया कि जाति गोस्वामी मन्दिर के स्वामी थे और वे अपने परिवारों के भरण-पोषण के लिए धंधे के रूप में मन्दिरों को बनाए रखकर उनमें श्रीविग्रहों की पूजा करवाते थे। वेदिका पर आसीन हर श्रीविग्रह के लिए सालों पहले निजी मन्दिर, जमीन, आय और पुजारी थे। लेकिन आर्थिक कारणों से गोस्वामियों ने सम्पत्ति की बिक्री कर दी, पूजा का वैभव घटा दिया और श्रीविग्रहों को एकत्रित कर दिया।

वृन्दावन में और भी मजेदार व्यक्ति थे : वृद्धा विधवा सरजिनी, गंजे सिर और शिखा

वाली और नंगे कठोर पैरों वाली, जो मन्दिर के गेट के पास एक कमरे में सोती थी और स्वामीजी के रसोई-घर की सफाई करती थी और उनके कपड़े धोती थी; पंचूदास गोस्वामी, मन्दिर के स्वामी का पुत्र, जो हमेशा पान चबाता रहता था और लाल किनारे की रेशमी धोती पहने, उनींदी आँखों से देखता, इधर-उधर घूमा करता था; काले बुड्ढे बाबाजी, जो रात में आते थे, हमेशा हँसते रहते थे और स्वामीजी के लिए चंदन घिसते थे; स्थानीय वैद्य, वनमाली कविराज, जो फर्श से लेकर छत तक छोटी शीशियों से भरे छोटे से कमरे में एक डेस्क के पीछे हमेशा मुसकराता हुआ बैठा रहता था और अध्यक्ष था; और एक प्रसिद्ध पंडित जो स्वामीजी के पास आते थे और सोने में पिरोई तुलसी की माला और हीरे की अंगूठियाँ पहने रहते थे। ये सभी व्यक्ति भक्त थे और पवित्र धाम वृन्दावन के निवासी थे। किन्तु स्वामीजी की तरह कोई नहीं था।

कीर्तनानन्द स्वामी को निराशा तक हुई कि वृन्दावन में कोई भी स्वामीजी की तरह नहीं था। उस देश में जहाँ हर एक भारतीय था और हर एक भक्त था, स्वामीजी फिर भी अनुपमेय थे। अन्य कोई भी उतना सरल, उतना गम्भीर, असत्य को भेदने में उतना समर्थ, उतना हृदय-ग्राही, या उतनी पूर्णता से कृष्ण में अनुरक्त नहीं था। अन्य कोई भी भक्तों का नेतृत्व नहीं कर सकता था।

• • •

यदि कीर्तनानन्द और अच्युतानन्द को वृन्दावन के कुछ निवासियों के प्रति सन्देह था, तो वृन्दावन के कुछ निवासी भी उनके प्रति सन्देह रखते थे। एक दिन जब एक योरोपीय हिप्पी-दम्पत्ति वृन्दावन में आ टपके, तो अच्युतानन्द उनके साथ कुछ मन्दिरों में गया। लेकिन रंगनाथ मन्दिर में उन्हें प्रवेश नहीं करने दिया गया। अच्युतानंद ने इसे प्रभुपाद को बताया। प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "यह इसलिए हुआ कि तुम उन मूर्खों के साथ वहाँ गये थे।" जब प्रभुपाद सड़कों पर से गुजरते थे, तो लोग नियमित रूप से उनकी ओर सम्मान से झुकते थे और कहते थे "दण्डवत्, महाराज।" लेकिन उनके अमरीकी अनुयायियों को वैष्णव रूप में स्वीकार करने में वे सतर्क थे।

• • •

अपने दोनों अनुयायियों को साथ लेकर श्रील प्रभुपाद स्वामी बान के पास फिर गए। एक रिक्शा में बैठे स्वामी बान के संस्थान की ओर जाते हुए प्रभुपाद ने अच्युतानन्द को बताया कि स्वामी बान ने अपने संस्थान को वैष्णव धर्म के अध्ययन के लिए स्थापित किया था, किन्तु उसे आगरा विश्वविद्यालय से सम्बन्धित कराया था, इसलिए कि संस्थान धन की कमाई नहीं कर रहा था। अब स्वामी बान के पास धन हो गया था, किन्तु संस्थान

अब एक मामूली संस्था बन गया है, वह आध्यात्मिक महत्त्व से गिर गया है।

जब श्रील प्रभुपाद और उनके शिष्य स्वामी बान की बैठक में बैठे थे, तो बान महाराज ने स्पष्ट कर दिया कि वे प्रभुपाद के अमेरिकन हाउस के लिए जमीन का अनुदान नहीं कर सकेंगे, लेकिन उनके शिष्य स्वामी बान के संस्थान में दाखिल होकर अध्ययन कर सकते थे। उन्होंने सलाह दी कि अच्युतानन्द ऐसा पहला शिष्य हो सकता था।

तब स्वामी बान उन्हें एक कक्षा की पढ़ाई दिखाने के लिए मुख्य भवन ले गए। प्रभुपाद के शिष्यों ने वहाँ संस्कृत के अध्ययन में तीन पंडितों और ब्रह्मचारियों के स्थान पर, जैसी कि उन्हें आशा थी, मूंछदार लड़कों और लगातार हँसती लड़कियों को देखा। प्रभुपाद ने भाषण दिया और तब कीर्तनानन्द से हरे कृष्ण रिकार्ड बजाने को कहा। कुछ मिनटों के बाद बान महाराज ने रिकार्ड बन्द करने को कहा, लेकिन यह देखकर कि स्वामीजी को आनन्द आ रहा था, कीर्तनानन्द ने बजाना जारी रखा।

अच्युतानन्द : *हम संस्थान में इधर-उधर घूमते रहे और मैंने सोचा, "यह केवल एक दुनियादारी स्कूल है। मैं यहाँ नहीं जाना चाहता। मैं राधा-दामोदर मंदिर में रहकर संस्कृत सीख सकूँ, तो भारत में मेरा समय अच्छा बीतेगा।"*

वे संस्थान में प्राप्त सुविधाएँ देखने के लिए घूमते रहे और छात्रावास देखने के बाद प्रभुपाद को सन्देह होने लगा कि क्या उनके अमरीकी शिष्य वहाँ के कठोर जीवन और अध्ययन को सहन कर सकेंगे। दोनों लड़कों में से कोई न कोई बीमार रहता था। पहले कीर्तनानन्द स्वामी को पेचिश हो गई थी, उसके बाद अच्युतानंद के पेट में कोई गड़बड़ी पैदा हो गई थी। फिर दोनों गरमी के मारे अशक्त हो रहे थे। "कुल मिलाकर," श्रील प्रभुपाद ने रूपानुग को न्यूयार्क लिखा, "अमेरिका से जो लड़के यहाँ आते हैं, वे पहले खिन्न हो जाते हैं, इसलिए मुझे पता नहीं कि वृन्दावन में हमारे अमरीकी भवन को कितनी सफलता होगी।" उनके लड़के विशेष अध्ययनशील और सादगी से रहने वाले नहीं थे। इसके अतिरिक्त, कीर्तनानन्द स्वामी और अच्युतानन्द दोनों को प्राच्य दर्शन संस्थान के प्राचार्य के प्रति एक प्रकार की अरुचि हो गई थी। और श्रील प्रभुपाद के मन में स्पष्टतः उस स्थान के बारे में संकोच था। "तुम वहाँ जाकर अध्ययन कर सकते हो," प्रभुपाद ने कहा, "लेकिन वहाँ रहना नहीं है। राधा-दामोदर मन्दिर में रहो और जाया करो। साइकल रख लो और उससे जाया करो।"

धीरे-धीरे, वृन्दावन में तुरन्त अमरीकी भवन स्थापित करने का विचार क्षीण होने लगा। प्रभुपाद को अपने लड़कों के लिए निजी स्थान की जरूरत थी और उसे पाने में समय लगेगा।

• • •

प्रभुपाद ने अनुभव किया कि नियमित ओषधि-सेवन, मालिश, विश्राम और वृन्दावन की गरमी से उनके स्वास्थ्य में सुधार होने लगा था। सितम्बर के मध्य में उन्होंने अमेरिका जाने के लिए अपने आपको नब्बे प्रतिशत ठीक बताया। उन्होंने कहा कि अक्तूबर के अन्त तक वे अमेरिका वापस पहुँच जायेंगे।

प्रभुपाद के गुरु-भाई, बी.आर. श्रीधर महाराज ने, जिनका आश्रम पश्चिम बंगाल के नवद्वीप में था, प्रभुपाद को लिखा और उन्हें आमंत्रित किया कि वे कार्तिक का मास उनके साथ आश्रम में बिताएँ और व्यासपूजा-समारोह में उनके साथ सम्मिलित हों। श्रील प्रभुपाद को पवित्र स्थल नवद्वीप जाने का और अपने गुरु-भाई से मिलने का विचार पसन्द आया। भगवान् चैतन्य के प्रारम्भिक वर्ष नवद्वीप में व्यतीत हुए थे। प्रभुपाद दिल्ली भी दोबारा जाना चाहते थे, जहाँ उन्हें अपनी पुस्तकों के मुद्रण के बारे में जानकारी प्राप्त करनी थी।

"स्वामीजी," अच्युतानन्द ने पूछा, "जब आप नवद्वीप जायेंगे, तो क्या उस समय मुझे यहाँ वृन्दावन में रहकर अध्ययन में लगे रहना होगा?"

"क्या तुम भगवान् चैतन्य का जन्म-स्थल नहीं देखना चाहते?" प्रभुपाद ने पूछा।

अच्युतानन्द देखना चाहता था। और प्रभुपाद, कीर्तनानन्द स्वामी और अच्युतानन्द एक साथ वृन्दावन से प्रस्थान करके दिल्ली में छिप्पीवाड़ा मन्दिर पहुँचे।

• • •

प्रभुपाद के दोनों शिष्यों के लिए छिप्पीवाड़ा मन्दिर का जीवन बहुत कठिन था। दिल्ली गरमी में जल रही थी और उसमें वृन्दावन के आकर्षण का अभाव था। पानी दिन में केवल दो घंटे आता था, वह भी टपक-टपक कर। वे प्रभुपाद के कमरे के लिए दो सुराहियाँ और उनके तथा अपने स्नान के लिए कई बाल्टियाँ भर लेते, उसके बाद दिन-भर पानी न मिलता। एक नेवला स्वतंत्रतापूर्वक मकान में विचरण करता रहता।

"क्या नेवले साँप को खा जाते हैं?" अच्युतानन्द ने पूछा।

"वे खा जाते हैं।" श्रील प्रभुपाद ने कहा, "वे कूड़ा-कचरा खाते हैं, वे हर चीज खाते हैं।" प्रभुपाद, जो गरमी, जलाभाव और नेवले तक को भी सामान्य बात समझते थे, शान्त बने रहे। कई युवा भारतीय संगीतज्ञ बगल के कमरे में नियमित रूप से सिनेमा के गीत अपने विद्युत् यंत्र, बोंगों और विद्युत् गिटारों पर बजाकर नृत्य के लिए अभ्यास किया करते थे। प्रभुपाद उसे सहन करते थे।

• • •

श्रीकृष्ण पंडित प्रभुपाद के अमेरिका में किए गए कार्यों की और उनके *श्रीमद्भागवत* के अंग्रेजी अनुवाद की प्रशंसा करते थे। छिप्पीवाड़ा राधा-कृष्ण मन्दिर के प्रबन्धक और एक सक्रिय हिन्दू-समाज के सचिव होने के नाते श्रीकृष्ण पंडित हिन्दू-धर्म के प्रचार में अभिरुचि रखते थे और इसलिए वे चाहते थे कि प्रभुपाद निकटस्थ गौरीशंकर मन्दिर में भाषण करें, जो दिल्ली के सर्वाधिक लोकप्रिय हिन्दू मन्दिरों में से एक था। प्रभुपाद जाने को और अपने साथ अच्युतानंद को ले जाने के लिए राजी हो गये। (कीर्तनानन्द स्वामी अमेरिका के लिए २२ अगस्त को प्रस्थान कर चुके थे।)

गौरीशंकर मन्दिर चांदनी चौक में था। पुरानी दिल्ली की कुछ भीड़-भाड़ से भरी और अत्यन्त घनी सड़कों से होकर प्रभुपाद और अच्युतानन्द ने रास्ता तय किया और मन्दिर के द्वार पर पहुँचकर उन्होंने अपने जूते उतार दिए और मन्दिर में प्रवेश किया। मुख्य अर्चाविग्रह शिवजी का था, किन्तु अन्य बहुतों के भी थे : राम, दुर्गा, काली, राधा-कृष्ण, हनुमान। दर्शनार्थी अलंकृत वेदिकाओं के सामने खड़े होकर श्रीविग्रहों के दर्शन करते हुए उनसे याचना कर रहे थे।

अच्युतानंद ने देवों की पूजा के विषय में प्रभुपाद से २६ सेकंड एवन्यू में जानकारी प्राप्त की थी। *भगवद्गीता* के अनुसार देवता सांसारिक कामनाओं की पूर्ति करते हैं, इसलिए कम बुद्धि वाले लोग उनकी पूजा करते हैं। प्रभुपाद ने कहा था कि वैष्णव देवों का सम्मान करता है—वस्तुत: वह सभी जीवों का, चींटी तक का सम्मान करता है—लेकिन वह पूजा केवल श्री भगवान् कृष्ण की या विष्णु की करता है।

अच्युतानंद ने स्वयं देखा था कि निराकारवादी भारतीयों को बहका रहे थे कि वे भगवान् के साकार रूप की अवज्ञा करके पूजा की सभी विधियों को समान मानें। अधिकतर भारतीयों को *भगवद्गीता* या कृष्ण की स्पष्ट जानकारी नहीं थी। अच्युतानन्द ने इस बात को अपने दिमाग में रखा, जब प्रभुपाद ने कुछ देवों की वेदियों के सामने उससे सिर झुकवाया। उसके बाद प्रभुपाद उसे राधा-कृष्ण के श्रीविग्रह के सामने ले गए। "देखो," प्रभुपाद ने कहा, "कृष्ण अपनी वंशी बजा रहे हैं। जहाँ तक देवों का प्रश्न है, उनमें से कुछ धनुष और बाण लिए हैं, कुछ के हाथ में गदा है, कुछ के हाथ में शस्त्र हैं, किन्तु राधा और कृष्ण केवल नृत्य कर रहे हैं और कृष्ण वंशी लिए हैं। इसलिए वे परम ईश्वर हैं।"

एक बड़े कमरे में एक मोटा-तगड़ा व्यक्ति, जिसकी लम्बी, सफेद दाढ़ी थी और जो फूलों की मालाएँ पहने था, कई तकियों की गद्दी पर बैठा था और बहुत से लोग उसे ध्यान से देखते हुए खड़े थे। अच्युतानंद को उसे देखने पर संताक्लाज की याद आई, "स्वामीजी, वह कौन है ?" अच्युतानंद ने पूछा।

"कोई योगी," प्रभुपाद ने बिना रुचि लिए जवाब दिया।

मुख्य व्याख्यान कक्ष में शिवजी का बड़ा तैलचित्र दीवार पर टँगा था और कक्ष श्रोताओं से भरा था—महिलाएँ रंगीन साड़ियाँ पहने थीं और बहुत से पुरुष चमकीली पगड़ियाँ धारण किए थे। कर्मकाण्डों और उपासकों के ऐसे हंगामे में अच्युतानन्द अपने आपको स्वामीजी के द्वारा सुरक्षित अनुभव कर रहा था। वे मंच पर बैठ गए और श्रीकृष्ण पंडित ने अपने मित्र भक्तिवेदान्त स्वामी का एकत्रित जन-समूह से परिचय कराया। श्रील प्रभुपाद एक घंटे तक हिन्दी में बोलते रहे।

छिप्पीवाड़ा वापस लौटते समय अच्युतानन्द ने आश्चर्य प्रकट किया कि प्रभुपाद ऐसे स्थान में भाषण करने क्यों गए थे, जहाँ इस तरह खिचड़ी प्रकार की पूजा हो। लेकिन प्रभुपाद से पूछे बिना ही उसकी समझ में आ गया कि प्रभुपाद कृष्ण के विषय में किसी भी जगह किसी के भी सामने बोलने को इच्छुक थे। क्या वे न्यूयार्क शहर नहीं गए थे? और न्यूयार्क के लोअर ईस्ट साइड से बढ़कर अधिक खिचड़ी प्रकार का स्थान क्या हो सकता था?

• • •

अपने कमरे के बाहर बरामदे में बैठे हुए प्रभुपाद संध्या की पूर्व बेला में जामा मस्जिद के विशाल गुम्बदों को देख सकते थे। एक संध्या को जब प्रभुपाद बैठे हुए मंद स्वर में जप कर रहे थे और अच्युतानन्द, जिसे अभी तक गायत्री मंत्र कंठस्थ नहीं हुआ था, पास में बैठा हुआ उसे अपने लिए पढ़ रहा था, एक हिन्दू सज्जन प्रभुपाद के पास आए और उनसे बात करने लगे। अच्युतानन्द ने शीघ्र गायत्री मंत्र समाप्त किया और बैठकर अपने गुरु महाराज की उन अज्ञात सज्जन से हिन्दी में होती बातचीत सुनने लगा। अच्युतानन्द यहाँ-वहाँ केवल कुछ शब्द ही समझ रहा था—आयुर्वेदिक ओषधियों का उल्लेख, कुछ पते, कुछ भारतीय नाम, शहर आदि। वे घंटों बात करते रहे और अच्युतानंद को आश्चर्य हो रहा था कि वह व्यक्ति कौन हो सकता था, जो स्वामीजी से इतनी देर तक बात कर सकता था। जब वह व्यक्ति चला गया तो अच्युतानन्द ने पूछा, "स्वामीजी, क्या वे आपके गुरु-भाई थे?"

प्रभुपाद ने कहा, "नहीं।"

"क्या वे कोई स्वामी हैं?"

प्रभुपाद बोले, "नहीं।"

"क्या वे आपके कोई सम्बन्धी हैं?"

"नहीं।"

"अच्छा, तो वे कौन थे?"

"वे मेरे मित्र हैं।" प्रभुपाद ने जोरदार शब्दों में उत्तर दिया।

• • •

कभी कभी प्रभुपाद के मिलने वाले उनके लिए कपड़े, फल या धातु से बने टिफिन में रखकर बने-बनाए भोजन की भेंट लाते थे। एक अधेड़ आयु की स्त्री, जिसने प्रभुपाद को गौरीशंकर मन्दिर में बोलते सुना था, उनके पास छिप्पीवाड़ा दफ़तर में आई और उनसे दीक्षा लेने की प्रार्थना करने लगी। प्रभुपाद ने उससे बात की और वे राजी हो गए और उन्होंने अच्युतानन्द से छोटे पैमाने पर हवन के लिए तैयारी करवाई। दीक्षा के समय उन्होंने स्त्री को मुकुंद दासी नाम दिया। वह प्रतिदिन प्रभुपाद का कमरा साफ करने आती थी और जब उसने देखा कि उनके खड़ाऊँ टूट गए हैं, तो वह उनके लिए नए खड़ाऊँ खरीद लाई।

चन्द्रशेखर प्रभुपाद को बहुत सालों से जानता था और उनका सचिव माना जाता था। लेकिन वह पियक्कड़ था। प्रभुपाद को सन्देह था कि विगत दो वर्षों में उसने उनके मेल बाक्स से दो हजार से अधिक रुपए चुराए थे। प्रभुपाद का छिप्पीवाड़ा का पता उनकी पत्रिकाओं और पुस्तकों पर छपा था और लोग उनकी पुस्तकों और *बैक टु गॉडहेड* के चंदे की रकम उन्हें भेज रहे थे। पिछले दो महीनों में प्रभुपाद के शिष्य लिखते आ रहे थे कि अपने पत्रों के साथ वे रकम भी भेजते रहे थे, लेकिन प्रभुपाद को कोई रकम प्राप्त नहीं हुई थी। एक दिन उन्होंने चन्द्रशेखर को देख लिया और पूछा, "मेरे मेल बाक्स की चाबी कहाँ है?"

"मैं समझता हूँ कि वह आपके पास है।" चन्द्रशेखर ने उत्तर दिया, "या हो सकता है कि वह श्रीकृष्ण पंडित के पास हो।" चन्द्रशेखर पिये हुए था।

"स्वामीजी," अच्युतानन्द क्रोध से भरकर बोला, "हमें चाहिए कि पुलिस में रिपोर्ट कर दें।"

प्रभुपाद ने सिर हिलाया, "नहीं।"

"अच्छा," अच्युतानन्द ने कहा, "यदि कानून इसे सजा नहीं देता, तो अगले जन्म में इसे कृष्ण सजा देंगे।"

"सच है।" प्रभुपाद ने सहमति प्रकट की। चन्द्रशेखर भयभीत दृष्टि से प्रभुपाद और उनके अमरीकी शिष्य को देख रहा था।

"तब हमें केवल एक काम करना है," अच्युतानन्द ने कहा, "क्या मैं पुलिस बुलाऊँ?"

"नहीं," प्रभुपाद ने कहा, "मैं उसे क्षमा करता हूँ।" इतने पर भी कुछ दिन बाद ही

प्रभुपाद का रिकर्ड प्लेयर गायब हो गया और प्रभुपाद को सन्देह पियक्कड़ चन्द्रशेखर पर हुआ।

• • •

प्रभुपाद अच्युतानन्द के साथ अपने बैंक आफ बड़ोदा, कुछ अमरीकी धन का विनिमय लेने के लिए गए थे। जब वे दरवाजे से घुसने वाले थे, तो संतरी ने उन्हें रोक दिया, यह समझकर कि वे साधू थे और भिक्षा के लिए आए थे। प्रभुपाद को क्रोध आ गया। वे संतरी से हिन्दी में जोर से बात करने लगे। संतरी बुड्ढा आदमी था। उसके पास एक बन्दूक थी और गोलियों का लम्बा पट्टा था और वह जीर्ण-शीर्ण अर्ध-शासकीय पोशाक पहने था। "यहाँ मेरा अपना खाता है," प्रभुपाद ने प्रतिवाद किया। अन्त में संतरी ने उन्हें अन्दर जाने दिया।

प्रभुपाद सीधे मैनेजर के पास गए और शिकायत की। "क्या आप सोचते हैं," प्रभुपाद बोले, "कि चूँकि मैं साधू हूँ, इसलिए मुझे भिक्षुक समझा जाना चाहिए?" प्रभुपाद ने मैनेजर को अमेरिका में अपने संघ और बैंक आफ बड़ोदा में अपने खाते के बारे में बताया। मैनेजर ने क्षमा-याचना की और संतरी को फटकार बताई।

• • •

एक दिन प्रभुपाद ने अच्युतानन्द को किसी भोजनालय में भेजा। "यदि तुम भारतीय व्यंजनों के प्रकार देखना चाहते हो," प्रभुपाद ने कहा, "तो वहाँ के आदमी से कहना कि तुम दस रुपए की मिठाई और दस रुपए का नमकीन चाहते हो। और तब तुम प्रकारों को देखोगे।" अच्युतानन्द बीमार था और बहुत सारी मिठाइयाँ खाने की बात उसके मन में नहीं आ सकती थी। लेकिन वह भोजनालय के पास खड़ा हो गया और देखने लगा। जब वह छिप्पीवाड़ा मन्दिर वापस आया, तो उसने प्रभुपाद से कहा कि उसने व्यंजनों को देख लिया; यद्यपि वह खा नहीं सकता था। "हाँ, लेकिन व्यंजनों के प्रकार तो देखो," प्रभुपाद ने निष्कर्षतः कहा। और उन्होंने समझाया कि कृष्णभावनामृत किस तरह व्यक्तिपरक था और विविधाओं से भरा था, शुष्क नहीं।

• • •

एक दूसरा अमेरिकन शिष्य प्रभुपाद के पास पहुँच गया—वह हैट एशबरी का रामानुज था। उसने प्रभुपाद के सैन फ्रांसिस्को छोड़ने के कुछ समय पहले दीक्षा ली थी और वह पूरी काली दाढ़ी रखता था। प्रभुपाद को दाढ़ी पसन्द नहीं थी। सावधानीपूर्वक

और अप्रत्यक्ष रूप से उन्होंने इसका उल्लेख किया, लेकिन रामानुज की दाढ़ी ज्यों की त्यों रही। रामानुज के पास तिब्बती बौद्ध धर्म पर एक पुस्तक थी और वह कृष्णभावनामृत की विचारधारा में डूबा नहीं लगता था। लेकिन वह भारत पहुँच गया था, एक अबद्ध, भावुक अमेरिकन शिष्य, प्रभुपाद के साथ भारतीय अनुभवों के लिए।

• • •

श्रील प्रभुपाद ने अपनी कुछ पुस्तकें भारत में प्रकाशित करने की योजनाओं पर विचार-विमर्श करने के लिए, दिल्ली के धनाढ्य उद्योगपति सेठ डालमिया से भेंट की। श्रीमान् डालमिया ने उनका अच्छा स्वागत किया, लेकिन सहायता के नाम पर केवल अस्पष्ट वादे किए। प्रभुपाद श्रीमान् डालमिया के सचिव हितसरन शर्मा से भी मिले, जो लोकप्रिय धार्मिक पुस्तकों के प्रकाशक, गीता-प्रेस के हनुमान प्रसाद पोद्दार के घनिष्ठ सहकर्मी थे। श्रील प्रभुपाद तीनों सज्जनों से पहले ही से परिचित थे, क्योंकि तीनों ने उनके *श्रीमद्भागवतम्* के पहले खंड के प्रकाशन के लिए अनुदान दिए थे। प्रभुपाद चाहते थे कि गीता-प्रेस उनका *गीतोपनिषद्* और *श्रीमद्भागवतम्* छापे। हितसरन शर्मा ने प्रभुपाद को एक चित्रों के युक्त *गीता* दिखाई, जो हिन्दी कविता में थी और जिसे उन्होंने हाल में ही प्रकाशित किया था। "किन्तु मेरी *गीता* और मेरा *भागवतम्*," प्रभुपाद खिन्न से प्रतीत होकर बोले, "भगवान् का वर्णन है। इनमें कृष्ण का वर्णन है।" श्रीमान् शर्मा ने कहा कि उन्हें मालूम नहीं कि गीता-प्रेस प्रभुपाद के विशाल ग्रंथों को कैसे छाप सकेगा। तो भी प्रभुपाद श्रीमान् शर्मा को अपना अभिकर्ता (एजेंट) बनाकर, *गीतोपनिषद्* को स्वयं छापने का विचार रखते थे।

११ अक्तूबर को प्रभुपाद ने ब्रह्मानंद को लिखा,

> हमें अपनी पुस्तकें अवश्य प्रकाशित करानी है; हमने उनके सम्पादन में और उनके लिए उपयुक्त प्रकाशक ढूँढने में बहुत समय नष्ट कर दिया है। जब मैं अकेला था, तो तीन खंड प्रकाशित हो गए थे, किन्तु गत दो वर्षों में मैं एक भी और खंड प्रकाशित नहीं कर सका। यह एक बड़ी पराजय है। यदि मेरे पास तुम जैसे एक या दो निष्ठावान् व्यक्ति और हों और यदि हम और प्रकाशन कर सकें तो हमारे मिशन की यह एक बड़ी सफलता होगी। मैं एक निष्ठावान् व्यक्ति के साथ किसी वृक्ष की छाया तले बैठ सकता हूँ और ऐसे कार्य में लग जाने से मुझे सभी रोगों से मुक्ति मिल जायेगी।

• • •

अमेरिका से प्रभुपाद के भक्त उन्हें नियमित रूप से लिखते थे। वे उन्हें फिर स्वस्थ देखने के लिए व्यग्र थे। लेकिन प्रभुपाद ने बताया कि वे भारत छोड़ना नहीं चाहते थे, जब तक वे यह स्वयं न देख लें कि उनके *गीतोपनिषद्* की छपाई आरम्भ हो गई है। *गीतोपनिषद्* का प्रकाशन और संयुक्त राज्य अमेरिका में स्थायी अधिवास की अनुमति—अमेरिका जाने के पहले वे इन दोनों लक्ष्यों को प्राप्त कर लेना चाहते थे। परन्तु अमेरिका वापस जाने का विचार उनके मन में प्रायः आया करता था।

> जिस तरह तुम लोगों को मेरा विछोह खल रहा है, उसी तरह मैं भी जितनी जल्दी हो सके वापस आना चाहता हूँ। मैं समझता हूँ कि मैं अब तुम्हारे देश जाने के योग्य हो गया हूँ और जैसाकि पहले निश्चित हुआ था मुझे विश्वास है कि अक्तूबर के अन्त तक मैं जरूर लौटने के योग्य हो जाऊँगा। लेकिन इसके पहले बहुत-से काम करने को हैं। मुझे अभी तक स्थायी विजा का आश्वासन नहीं मिला है। सबसे अच्छा यह होगा कि हर केन्द्र से मुझे आमंत्रण भेजा जाये कि मेरी वहाँ उपस्थिति बहुत आवश्यक है।... इस समय मुझे अपनी पुस्तकों की छपाई का कार्य यहाँ आरम्भ कर देने की बड़ी चिन्ता है, यदि मैकमिलन कम्पनी इस काम को स्वीकार नहीं करती। इसलिए मैकमिलन से "हाँ या ना" प्राप्त करके मुझे भेजो। यदि मैकमिलन नहीं छापना चाहता, तो पाण्डुलिपियाँ, वे पूर्ण हों या अधूरी, नीचे के पते पर भेज दो : पंडित हितसरन शर्मा, द्वारा डालमिया इंटरप्राइजेज, सिंधिया हाउस, नई दिल्ली। भेजने के बाद मुझे लिखो और मैं यहाँ यथावश्यक करूँगा।

जो भारतीय मित्र प्रभुपाद से मिलने आते थे, वे अमेरिका के बारे में उनके वर्णन को उत्सुकतापूर्वक सुनते थे। वहाँ लाखों कारें थीं, लम्बी-चौड़ी सड़कें थीं और हजारों ऐसे युवक थे, जो अपने माँ-बाप की सम्पत्ति छोड़ रहे थे। किन्तु प्रभुपाद से मिलने वालों की समझ में यह नहीं आता था कि वे अमेरिका क्यों गए थे। ऐसा नहीं था कि उनकी समझ कमजोर थी, ऐसा भी नहीं था कि उनमें से कोई कभी पश्चिम की यात्रा पर न गया हो। प्रभुपाद की अमरीकी यात्रा का अनुभव अपने शिष्यों के साथ घनिष्ठ आध्यात्मिक सम्बन्धों में निहित था। भला एक बाहरी व्यक्ति उनके मन्दिरों और उनके पश्चिम के शिष्यों की गतिशीलता को कैसे समझ सकता था? प्रभुपाद और उनके शिष्यों के अतिरिक्त भला इन चीजों को कौन समझ सकता था?

> मेरा मन हमेशा तुम लोगों के साथ है। वस्तुत: तुम्हारा देश अब हमारा घर बन गया है। भारत मेरे लिए पराया देश है। कारण यह है कि मेरा आध्यात्मिक परिवार वहाँ है और मेरे सांसारिक सम्बन्धी भारत में हैं। इसलिए वास्तव में जहाँ मेरा आध्यात्मिक परिवार रहता है, वहीं मेरा घर है।

श्रील प्रभुपाद की एक ऐसे विश्व-व्यापक समाज की कल्पना, जहाँ भक्तजन मन्दिरों में प्रवचन और पुस्तकों का प्रकाशन कर रहे हों—ऐसी कल्पना जो प्रभुपाद के मन में उनके अमेरिका जाने के पूर्व भी थी—अब साकार हो रही थी। लेकिन यह उन्हीं पर निर्भर थी। उनकी अनुपस्थिति में उनके शिष्यों को उनके आदेशों का पालन करना और उनके पत्रों को पाना मात्र ही सहारा थे। जब दयानंद और नन्दराणी सैन फ्रांसिस्को से लास एंजलेस में एक नए मन्दिर की स्थापना के लिए गए, तो उनको सहारा और मार्गदर्शन देने वाले केवल स्वामीजी के निर्देश थे : "जब भी कृष्णभावनामृत संघ की कोई नई शाखा खुलती है, तो मुझे बहुत प्रसन्नता होती है। और मन और हृदय से मेरी शुभ-कामनाएँ तुम लोगों के साथ हैं।" स्वामीजी का पत्र पाकर उन लोगों को विश्वास हो गया कि उन्होंने ठीक काम किया है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता था कि पति और पत्नी में कभी-कभी लड़ाई होती थी और उनके पास धन नहीं था—मुख्य बात यह थी कि स्वामीजी प्रसन्न थे।

बोस्टन से सत्स्वरूप ने लिखा कि वह और अन्य भक्त अपने आवास से बोस्टन विश्वविद्यालय के निकट एक किराए के स्टोरफ्रंट में जा रहे थे। जब सत्स्वरूप पहली बार नए स्टोरफ्रंट में प्रविष्ट हुआ, तो उसे फर्श पर पड़ा, स्वामीजी द्वारा दिल्ली से ६ अक्तूबर को प्रेषित एक हवाई पत्र मिला।

> मैं समझ सकता हूँ कि तुमने बोस्टन में एक बहुत बढ़िया स्थान प्राप्त कर लिया है और हमारे आन्दोलन को वहाँ विद्यार्थी-समाज में आगे बढ़ाने की बड़ी अच्छी सम्भावना है। हमारा आन्दोलन तुम्हारे देश की युवा पीढ़ी के लिए निश्चय ही अत्यन्त प्रभावशाली है और यदि हम तुम्हारे देश के विद्यार्थी वर्ग को आकर्षित करने में सफल हो जाते हैं, तो निश्चय ही वह सारे संसार में फैल जायेगा और भगवान् चैतन्य की इस भविष्यवाणी को पूरा करेगा कि संसार के हर गाँव और हर कस्बे में भगवान् के यशस्वी संकीर्तन आन्दोलन के माध्यम से उनकी विजय पताका फहरेगी। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए मन और हृदय से प्रयत्न करो और तुम्हारा जीवन एक सफल मिशन बन जायेगा।

पत्र इतना अच्छा था कि मानो स्वयं स्वामीजी स्टोरफ्रंट का उद्घाटन करने और प्रवचन आरम्भ करने के लिए आ रहे हों। उससे सत्स्वरूप को पूरे निर्देश और प्रेरणा की प्राप्ति हो गई। और वह पत्र व्यक्तिगत था। उसी पत्र में प्रभुपाद ने लिखा था।

> मेरी बराबर अभिलाषा तुम्हारे संरक्षण में वापस आने की है, जिससे मैं टाइप के काम के भार से तुम्हें लाद सकूँ... मुझे आशा है कि हम शीघ्र फिर मिलेंगे और कृष्णभावनामृत सम्बन्धी व्यस्तताओं में एक दूसरे की सहायता करेंगे। मैं अब नब्बे प्रतिशत ठीक हो गया हूँ और मैं सोचता हूँ कि मैं कुशलतापूर्वक वापस आ सकता हूँ। यह मैंने स्वयं टाइप किया है। दो दिन से मैं अकेला हूँ और प्रयोग के रूप में हर काम स्वयं कर रहा हूँ। इससे सिद्ध होता है कि मैं अब ठीक हूँ। कृपा करके मेरा आशीष वहाँ के सभी लड़कों और लड़कियों को कहना।

न्यू मेक्सिको में सुबल प्रभुपाद की वापसी पर उनके लिए सार्वजनिक भाषणों का कार्यक्रम निश्चित करने की कोशिश कर रहा था और प्रभुपाद उसे प्रोत्साहित कर रहे थे : "यदि तुम समझते हो कि दिसम्बर के पहले सप्ताह तक मेरा टी.वी. कार्यक्रम हो सकेगा, तो तुम इसकी योजना बना सकते हो क्योंकि नवम्बर के मध्य तक मैं तुम्हारे देश में अवश्य पहुँच जाऊँगा।"

श्रील प्रभुपाद ने जनार्दन को मांट्रियल लिखा और उसकी दार्शनिक शंकाओं का उत्तर दिया और उसे प्रोत्साहित किया कि वह आध्यात्मिक दृष्टि से अनिच्छुक अपनी पत्नी के साथ धैर्य से काम ले। और रायराम को, जो न्यूयार्क से *बैक टु गॉडहेड* पत्रिका का सम्पादन कर रहा था, उन्होंने दूसरे प्रकार का विचारपूर्ण आश्वासन दिया।

> मुझे प्रसन्नता है कि *बैक टु गॉडहेड* तुम्हारी देखरेख में आने से चीजों में सुधार हो रहा है। इसका तात्पर्य यह है कि कृष्ण तुम्हें अधिकाधिक सुविधाएँ दे रहे हैं। कृष्ण इतने अच्छे स्वामी हैं कि वे निष्ठावान् सेवक को अधिक सुविधाएँ और उन्नति प्रदान करते हैं।

९ अक्तूबर को जब प्रभुपाद ने कलकत्ता के लिए प्रस्थान किया, तो उन्होंने श्रीकृष्ण पंडित के लिए एक भिन्न प्रकार का पत्र लिखा। प्रभुपाद श्रीकृष्ण पंडित से इस्कान के लिए छिप्पीवाड़ा मन्दिर को खरीदने या कम-से-कम एक कमरा, करारनामा पर किराए पर देने के लिए बात चला रहे थे। प्रभुपाद अपनी पुस्तकों के प्रकाशन के लिए उस कमरे को

दिल्ली में मुख्यालय के रूप में चाहते थे। उनके कलकत्ता के लिए प्रस्थान के दिन श्रीकृष्ण पंडित किसी तरह उपलब्ध नहीं थे। और प्रभुपाद उनके लिए हाथ से लिखा एक छोटा-सा पत्र छोड़ गए।

> यदि आप कमरे के बारे में कुछ तय नहीं करते हैं, तो मैं आगे दिल्ली नहीं आऊँगा। मैं कलकत्ता से सीधे प्रशान्त महासागर के रास्ते अमेरिका चला जाऊँगा, जिसके लिए सेठ डालमिया टिकट का वादा कर चुके हैं।